ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 397-399

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16, YEAR- June -2020

आधुनिकता के दर्पण में दलित चिंतन

धर्मेश कुमार
शोध अध्येता– इतिहास विभाग, दी.द. उ. गो. वि. वि. गोरखपुर (उ0प्र0), भारत

Received- 24.07.2020, Revised- 27.07.2020, Accepted - 28.07.2020 E-mail: - dharmeshkumar608@gmail.com

सारांश : *दलित समाज हजारों वर्षों तक अस्पृश्य या अंत्यज समझी जाने वाली उन तमाम शोषित जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयुक्त होता है, जो हिंदू धर्म शास्त्रों द्वारा हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर स्थापित की गई है। संवैधानिक शब्दावली में इन्हें अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति कहा गया है। सन 2011 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या में दलितों की संख्या का प्रतिशत लगभग 16–6 है।*

कुंजीभूत शब्द– *दलित समाज, अस्पृश्य, अंत्यज, जातियों, सामूहिक रूप,शास्त्रों, व्यवस्था, पायदान ।*

भारतीय सामाजिक व्यवस्था प्रमुख चार वर्णों में विभाजित था– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। इस वर्ण व्यवस्था का स्वाभाविक रूप से प्रमुख उद्देश्य समाज के प्रभुत्वशाली वर्गों का अपने को शीर्ष स्थान पर स्थापित करना था। स्वाभाविक रूप से उस समाज के कमजोर और वंचित लोगों को सबसे निचले स्तर पर रखा गया उन्हें शूद्र कहा गया। जिसका कर्तव्य ऊपर की तीनों वर्णों की सेवा करना था। संभव है कि प्रारंभ में एक वर्ण से अपने कर्मों के आधार पर दूसरे वर्ण में स्थानांतरण होता रहा हो, परंतु उत्तर वैदिक काल में वर्ण का निर्धारण जन्म से होने लगा और वर्ण में स्थानांतरण संभव नहीं रह गया। कालांतर में शूद्रों को अस्पृश्य और अंत्यज कहा जाने लगा। और उन पर शेष वर्णों से घुलने मिलने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। कालांतर में सत्ताएं और राजवंश बदलते रहे। परंतु वर्ण व्यवस्था और उसके रूढ होकर जाति व्यवस्था में बदलने से रोकने में कोशिश किसी ने करने की जरूरत नहीं समझी। राजपूत, मुसलमान तथा अंग्रेज किसी देषी विदेशी सत्ताधारी वर्ग ने भारतीय समाज की विकृति जाति व्यवस्था को समाप्त करने की कौन कहे उसने कभी सार्थक हस्तक्षेप करने की कोशिश भी नही की। इसका स्वभाविक कारण संभवत यही था की विभाजित समाज सदैव शासक और सत्ताधारी समूह के लिए सुविधाजनक होता है क्योंकि वह कोई संगठित विरोध कर पाने में समर्थ नहीं हो सकता।

19वीं शताब्दी भारत में पुनर्जागरण का काल माना जाता है, जिसकी शुरुआत राजा राममोहन राय ने किया।[1] और दयानंद सरस्वती तथा विवेकानंद इत्यादि ने भी प्रमुख रूप से वंचित शूद्रों के लिए अलग से कुछ सार्थक करने की कोशिश नहीं की और वर्णों में सुधार के लिए ही मुख्य रूप से सक्रिय रहें। इस क्रम में दलित समाज में भी कुछ ऐसे सुधारक पैदा हुए, जिन्होंने दलितों की स्थिति को सुधारने का प्रयास किया, उनमें शिक्षा के महत्व का प्रसार किया और जातिगत व्यवसाय छोड़ने के लिए प्रेरित किया। इन लोगों के समेत सुधारों का व्यापक प्रभाव पड़ा तथा दलित समाज में भी चेतना का उदय हुआ। इन सुधारकों में ज्योतिबा राव फूले, नारायण गुरु, संत गाडगे, ई.वी. रामास्वामी नयकर, और डॉ. भीम राव अम्बेडकर आदि का नाम उल्लेखनीय है।

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत की दलित जातियों को शिक्षा प्राप्त करने तथा सरकारी सेवाओं में प्रतिभाग करने का अवसर प्राप्त हुआ। भीमराव अंबेडकर जिन्होंने कालांतर में एक व्यापक दलित आंदोलन का संचालन किया, को ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रोत्साहन मिला, यद्यपि इसके पीछे कुछ निहित कारण विद्वान थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही दलितों की बेहतरी के लिए संविधान में अनेक प्रावधान जोड़े गए हैं तथा अन्य कानूनों और आयोगों का सृजन किया गया।

दलित चिंतन में अग्रणी भूमिका निभाने वाले महापुरुष ज्योतिराव गोविंदराव फूले हैं, जिन्होंने दलित समाज में सुधार लाने के लिए अस्पृश्यता और जातिवाद को मिटाने के लिए अपना अभूतपूर्व बलिदान दिया। पिछड़ें समाज में ज्ञान का प्रसार करने के लिए और उनमें आत्म सम्मान की भावना भरने का प्रयास किया। सामाजिक क्रांति के जनक, भारत का मार्टिन लूथर, नारी शिक्षा के समर्थक तथा नारी मुक्तिदाता और दलितों तथा पिछड़ों के आधुनिक युग के मसीहा आदि अनेक विशेषण से अलं.त किया गया है। मुंबई में 11 नवंबर, 1887 को एक अभूतपूर्व महती सभा में उन्हें महात्मा पद से विभूषित किया गया। पी.के. आत्रे महात्मा फुले नामक फिल्म के निर्माण का उद्घाटन करते हुए बी. आर. अंबेडकर ने ज्योति राव फूले की गणना भारत के महानतम समाज सुधारक में की थी।[2]

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16, YEAR- June -2020

केरल में दलित चिंतन का कार्य करने में अग्रणी भूमिका नारायण गुरु की रही। नारायण गुरु का जन्म 20 अगस्त 1854 ई. को त्रिवेंद्रम से 12 किलोमीटर उत्तर मे स्थित चपदंती नामक कस्बे में हुआ था।[3] नारायण गुरु ने जात पात का खुलकर विरोध किया और दलितों को पूजा–पाठ से दूर रहने को कहा। उन्होंने निम्न जाति व उच्च जाति की भावना का विरोध किया। पेरियार ई वी रामास्वामी नायकर का जन्म 17 सितंबर 1879 ई. को मद्रास प्रांत के इरोडू में हुआ था इनके पिता वेंकट शनया नायकर तथा माता चिन्ना मथाई अमला थी।[5] पेरियार ने अपने दलित चिंतन में लिखा की जो ईश्वर की पूजा करता है वह असभ्य हैं, यही नहीं नए शरणार्थियों को फार्म में प्रतिज्ञा लिखने का निर्देश दिया था और यह प्रतिज्ञा थी कि "मैं इस ईश्वर का विरोध करता हूं। मैं ब्राह्मणों को स्वीकार नहीं करता। मैं जाति और धर्म पर विश्वास नहीं करता उन्होंने 'सच्ची रामायण' नामक एक ग्रंथ की रचना भी की, जिसमें उन्होंने रामायण के समस्त पात्रों का वास्तविक चित्रण किया है।[6]

अतिरिक्त इसके दलित और पिछड़ों के मसीहा और उद्धारक कहे जाने वाले महापुरुषों में संत गाडगे, छत्रपति शाहूजी महाराज, अय्यंकाली आदि ने दलित चितन पर महान कार्य किए हैं फिर भी दलित और पिछड़ों में बहुत सुधार नहीं हुआ।

बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक से दलित और शोषित समाज में सुधार होना शुरू हुआ। इनके उत्थान तथा सुधार के लिए अथक प्रयास करने वाले महान पुरुष का नाम डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर है। डॉक्टर भीमराव अंबेडकर का जन्म 1891 ई. को इंदौर जिले के महू छावनी में हुआ था। रामजी सकपाल व माता का नाम भीमाबाई था। वह अपने माता पिता की चौदहवीं संतान थे।[7]

डॉक्टर बाबा साहब भीमराव अंबेडकर के क्रांति के कारण वउनके संघर्षों के कारण भारतीय संविधान एवं 1955 के अस्पृश्यता निवारण कानून तथा केंद्रीय प्रांतीय सरकारों द्वारा दलितों की स्थिति को सुधारने के लिए जो कदम उठाए गए हैं।[8] वह पर्याप्त तो थे लेकिन सदियों से चली आ रही दलितों के प्रति घृणात्मक भावना को सिर्फ उक्त कदमों द्वारा दूर करना संभव नहीं था क्योंकि उक्त वैधानिक एवं कानूनी व्यवस्था को लागू करने वाला प्रशासनिक ढांचा सवर्णों के हाथ में था। अतः उनके द्वारा संवैधानिक भावना एवं कानूनों की अनदेखी की गई और वांछित प्रगति न हो सकी और दलितों की स्थिति में नाममात्र का सुधार हो सका।

बाबा साहब अंबेडकर के इन्हीं प्रयत्नों के फलस्वरुप स्वतंत्रता पश्चात भारत के दलित नेताओं ने अपने कार्यों और विचारों को आगे बढ़ाया, जिसमें स्वतंत्रता के पश्चात मा. कांशीराम ने दलित चिंतन और विमर्श को आगे बढ़ाया। और दलित उद्धार के लिए जीवन पर्यंत कार्य करते रहें और दलितों के अंदर चेतना का संचार किये। मा. कांशीराम का जन्म 15 मार्च, 1934 ई. को पंजाब के गांव खावसपुर, जिला रोपड़ में रामदसिया सिक्ख परिवार में हुआ था।[9] कांशीराम ने दलित उद्धार कार्य करने के लिए अपनी नौकरी छोड़ दी। 1964 में नौकरी से त्यागपत्र देने के पश्चात् कांशीराम ने बहुजन समाज के कर्मचारियों के संगठन बामसेफ (BAMCEF) की रूपरेखा बनाई जिसका विधिवत गठन 6 दिसंबर 1978 को हुआ।[10] इस संगठन के पूर्व माननीय कांशीराम ने 'republican party of India' तथा दलित पैंथर में सक्रिय रुप से कार्य किया था।

14 अप्रैल, 1984 को कांशीराम ने बहुजन समाज पार्टी नामक राजनीतिक दल की स्थापना किया, बहुजन समाज पार्टी इस समय भारत की राष्ट्रीय पार्टी है।[11] मा. कांशी राम के राजनीतिक विचार महात्मा ज्योतिबा फूले, छत्रपति साहूजी महाराज, डॉक्टर अंबेडकर, पेरियार रामास्वामी के विचारों पर आधारित था। उनका मानना था दलित समस्या का मूल कारण मनुवादी व्यवस्था है और भारत की तत्कालीन सभी राजनीतिक पार्टियां इस व्यवस्था को किसी न किसी रूप से जीवित रखना चाहती हैं। इसी कारण इन पार्टियों ने अपने आकर्षक नारों के आधार पर दलित समाज का शोषण किया तथा उसको गुमराह किया। कांशी राम ने अपनी पार्टी बहुजन समाज पार्टी को परिवर्तनवादी तथा अंबेडकरवादी अर्थात मानववादी जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व पर आधारित है। उनके शब्दों में बीएसपी अंबेडकरवादी पार्टी है। उनका मानना था कि शासन व्यवस्था में दलितों के प्रतिनिधित्व का स्वरूप, प्रभावहीन एवं अपर्याप्त है। हिंदू धर्म और जाति व्यवस्था की संस्कृति को कांशीरामपूर्ण असमानता की संस्कृति मानते थे और पूर्ण असमानता की संस्कृति को परम समानता (Absolute Equality) में बदलना चाहते थे। यह उनका परम कर्तव्य था इन्होंने अपना कार्यक्षेत्र विशेष रूप से उत्तर प्रदेश को बनाया।

वर्तमान समय में दलित चिंतन एक ज्वलंत विषय है, जिस पर शोध एवं अध्ययन के क्षेत्र में व्यापक स्तर पर कार्य किया जा रहा है, परंतु इसके अनेक पहलू ऐसे हैं जिन पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात दलित आंदोलन से संबंधित अनेक संस्थानों की स्थापना की गई इनके प्रति शासन के दृष्टिकोण और नीतियों पर अभी बहुत से कार्य करना है।

वर्तमान समय में बहुत से दलित चिंतक अभी

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16, YEAR- June -2020

कार्य कर रहे हैं। चंद्रभान प्रसाद–चंद्रभान प्रसाद का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के भादव नामक गांव में 02 सितंबर, 1958 को एक दलित परिवार में हुआ था। चंद्रभान प्रसाद ने दलित समाज में चेतना लाने के लिए बहुत से कार्य किए। उन्होंने दलित समस्या को बताते हुए कहा कि "लगभग हर धर्म दर्शन में सृष्टि एवं मानव की उत्पत्ति के सिद्धांत की व्याख्या की है, पर हिंदू धर्म दर्शन एकमात्र धर्म– दर्शन है इसमें उत्पत्ति नहीं, बल्कि मानव वर्गों की उत्पत्ति का सिद्धांत प्रतिपादित किया है। इस संदर्भ में ऋग्वेद का पुरुष सूक्त मील का पत्थर है, क्योंकि इसी सूक्त में सृष्टि व मानव वर्गों के उत्पत्ति का सिद्धांत प्रतिपादित है।" समकालीन दलित चिंतकों में चंद्रभान प्रसाद निरंतर कार्य कर रहे हैं।[12]

कंवल भारती–समकालीन दलित चिंतक है। कंवल भारती के दलित राजनीतिक विचार भारत के परंपरागत हिंदू वर्ण व्यवस्था जिसका प्रभाव भारतीय समाज एवं राज्य पर समान रूप से था। दलितों को समस्त मानवीय अधिकारों से वंचित करती रही राजनीति क्रियाकलापों में भाग लेने का अधिकार दलितों को नहीं था।[13]

आधुनिक भारत में ज्योतिबा फुले ने सर्वप्रथम राजनीति क्रियाकलापों में दलितों सहित सभी पिछड़ी जातियों के प्रतिनिधित्व की मांग की एवं आंदोलन चलाया। 1902 में छत्रपति शाहू जी महाराज ने अपने राज्य में पिछड़े और दलितों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के प्रयासों के फलस्वरूप 1932 में तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने दलितों को राजनीतिक अधिकारों को स्वीकार किया। महात्मा गांधी और हिंदू नेताओं ने डॉक्टर अंबेडकर के द्वारा प्राप्त कम्युनल अवार्ड का विरोध किया गया और दलितों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को स्वीकार नहीं किया गया। कंवल भारती समकालीन दलित चिंतकों में अग्रणी व्यक्ति हैं। वे दलित समस्या को राष्ट्रीय उन्नति तथा अवनति से जोड़कर देखने का आग्रह करते हैं इस प्रकार वे इस को राष्ट्र की समस्या मानते हैं, ना कि केवल दलितों की समस्या कंवल भारती के अनुसार, यह समस्या एक राष्ट्रीय समस्या के रूप में है। इसके केंद्र में दलित मुक्ति का प्रश्न राष्ट्रीय मुक्ति का प्रश्न है करोड़ों लोगों के लिए अलगाववाद का जो समाजशास्त्र और धर्म शास्त्र ब्राह्मणों ने निर्मित किया उसने राष्ट्रीयता को खंडित किया और उसी के कारण अपनी स्वाधीनता खो बैठे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. धनंजयकीर, महात्मा ज्योतिबा फुले, फादर ऑफ अवर सोशल रीबुलेशन, पापुलर प्रकाशन, बंबई, द्वितीय संस्करण 1964,पृ0 52,शंभूनाथ(संपादक), सामाजिक क्रांति के दस्तावेज, भाग–1वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण2004।
2. देवेंद्र कुमार वेंसतरी, भारत के सामाजिक क्रांतिकारी, दलित साहित्य प्रकाशन संस्था, नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2001, पृ0122।
3. पूर्वोक्त, पृ0 140।
4. शंभूनाथ, सामाजिक क्रांति के दस्तावेज, भाग–2, पृ0 1051।
5. डॉ0 बृजलाल वर्मा, सामाजिक क्रांति के अजेय योद्धा पेरियार ई0वी0 रामास्वामी, भावना प्रकाशन, इलाहाबाद, कानपुर, प्रथम संस्करण, 1995–1996, पृ0 6–10।
6. पूर्वोक्त, पृ0 140।
7. डॉ0 सूर्य नारायण रणसुंभे, डॉ बाबासाहेब आंबेडकर, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1928 पृ027।
8. डॉ बृजलाल बर्मा, सामाजिक न्याय के पुरस्कतारू डॉ0 भीमराव अंबेडकर, भावना प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, 1991–92 पृ0 10।
9. सतनाम सिंह, चंद्रभान प्रसाद (भूमिका)– बहुजन नायक कांशीराम, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2005,पृ013।
10. डॉ कुसुम मेघवाल, भारतीय राजनीति केआलोड़नकर्ता कांशीराम, राजस्थान दलित साहित्य अकादमी, उदयपुर (राज.), प्रथम संस्करण, 2002,पृ0 34।
11. कुमारी मायावती, मेरे संघर्षमय जीवन एवं पूजन मूवमेंट का सफरनामा, भाग–1 प्रकाशक एवं वितरक, बहुजन समाज पार्टी, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 15 जनवरी, 2006 पृ0 65।
12. चंद्रभान प्रसाद, विश्वासघात,डॉ0एस0ए0 प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996,पृ0 231।
13. कंवल भारती, दलित विमर्श की भूमिका, इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहाबाद, 2002,पृ0 17।
14. अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम 1955 के व्यापक अध्ययन हेतु अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के कमिश्नर की वार्षिक रिपोर्ट 1955,(पांचवी रिपोर्ट), दूसरा भाग, परिशिष्ट 2का अवलोकन।
15. प्रसाद, डॉ0 अनिरुद्ध,राजषी छत्रपति शाहू जी महाराज, व्यक्तिएवम्उसकी प्रासंगिकता (आचार्य एवम् विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, दी0द0 उ0 गो0 वि0 वि0 गोरखपुर एवं संयोजक शाहूजी महाराज जयंती समारोह, 2002)।

*****